मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते।।१६।।

मनःप्रसादः=मन की प्रसन्नता; **सौम्यत्वम्**=दूसरे के प्रति कपट से रहित; **मौनम्**=गम्भीरता; **आत्मविनिग्रहः**=आत्मसंयम; **भावसंशुद्धिः**=स्वभाव की शुद्धि; **इति**=ऐसे; **एतत्**=यह; **तपः**=तपः **मानसम्**=मन का; **उच्यते**=कहा जाता है।

अनुवाद

मन का प्रसाद, सरलता, मौन, आत्मसंयम और अन्तःकरण की शुद्धि,—यह सब मन सम्बन्धी तप है।।१६।।

तात्पर्य

मन को तपोनिष्ठ करने का अर्थ उसे इन्द्रियतृप्ति से हटाना है। मन को इस प्रका· शिक्षित करना है जिससे वह निरन्तर परहित-चिन्तन में लगा रहे। इसका सर्वोत्तम गाधन विचारों का मं न धारण करना है। यह अनिवार्य है कि कृष्णभावना से विचलित होकर एक क्षण के लिए भी इन्द्रियतृप्ति में प्रवृत्त न हो। स्वभाव की शुद्धि होना कृष्णभावनाभावित हो जाना है। मन की प्रसन्नता इसे इन्द्रियतृप्ति के विचारों से विरत करने पर ही हो सकती है। इन्द्रियतृप्ति का जितना अधिक चिन्तन होगा, मन उतना ही अधिक व्यग्र और उत्तेजित हो उठेगा। वर्तमान काल में हम मन को कितने ही व्यर्थ प्रकार से इन्द्रियतृप्ति में लगाये रखते हैं; इस कारण वह कभी प्रसन्न नहीं हो सकता। सुख का सर्वोत्तम साधन यह है कि मन को पुराण, महाभारत, आदि वैदिक शास्त्रों में लगा दिया जाय। ये ग्रन्थ तृप्तिदायक कथाओं से परिपूर्ण हैं। इस ज्ञान से लाभ उठाकर शुद्ध हुआ जा सकता है। **सौम्य**, अर्थात् मन में कपट का लेश भी न हो और सदा सब का हित-चिन्तन करता रहे। **मौन** का अर्थ नित्य-निरन्तर आत्म-मनन करना है। इस दृष्टि से कृष्णभावनाभावित पुरुष पूर्ण मौनी होता है। **आत्मविनिग्रह** का तात्पर्य इन्द्रियतृप्ति से मन को अलग करना है। **भावसंशुद्धि**, अर्थात् अन्तःकरण की शुद्धि व्यवहार की निष्कपटता से होती है। ये सब गुण मन सम्बन्धी तप के अन्तर्गत हैं।

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः।
अफलाकांक्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते।।१७।।

श्रद्धया=श्रद्धासहितः **परया**=दिव्य; **तप्तम्**=किया गया; **तपः**=तपः **तत्**=वह; **त्रिविधम्**=तीन प्रकार का; **नरैः**=मनुष्यों द्वारा; **अफलाकांक्षिभिः**=फल न चाहने वाले; **युक्तैः**=एकाग्रचित्त से तत्पर; **सात्त्विकम्**=सात्त्विक; **परिचक्षते**=कहा जाता है।

अनुवाद

लौकिक फल को न चाहने वाले पुरुषों द्वारा श्रीभगवान् की प्रसन्नता के लिए परम श्रद्धा के साथ किये गए इस तीन प्रकार के तप को सात्त्विक कहते हैं।।१७।।